इकाई 32 विज्ञान : विकास के पथ पर

इकाई की रूपरेखा

32.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
32.2 सभी के लिए समृद्धि की खोज
प्रभुत्व के साधन के रूप में प्रौद्योगिकी
32.3 नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था
32.4 खंडित अवधारणाएँ
32.5 आत्मनिर्भरता
राष्ट्रीय विकास के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी
32.6 सारांश
32.7 अन्त में कुछ प्रश्न
32.8 उत्तर

32.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने विज्ञान और समाज के आपसी संबंध के बारे में पढ़ा। आपने यह भी पढ़ा कि विशेष सामाजिक संदर्भ में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास की दिशा के बारे में निर्णय लेते समय, सामाजिक उद्देश्यों को प्राथमिकता देनी चाहिए। इस इकाई में हम पढ़ेंगे कि असमता वाले संसार में किस प्रकार विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग सबकी समृद्धि के साधन के रूप में किये जाने की बजाय अपनी धाक जमाने के लिए किया जाता है। इस परिस्थिति से "नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था" की मांग पैदा हुई है। यह मांग विकासशील देशों के लोगों की इस प्रबल कामना की द्योतक है कि प्राकृतिक संसाधन और ज्ञान के भण्डार में सभी का बराबर का हिस्सा होना चाहिए क्योंकि यह समस्त मानव समाज की धरोहर है। जिन देशों ने गुलामी की बेड़ियां उतार कर फेंक दी हैं, वे अपनी जनता की भलाई के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी का अपने देश में उपयोग करना चाहते हैं। वे विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समुचित विकास के लिए अपने देश में ही उपयुक्त सुविधाएँ जुटाना चाहते हैं जिससे वे आत्मनिर्भर हो सकें और निर्णय लेने में और किसी देश का दबाव न सहना पड़े।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- समझ सकेंगे कि प्राकृतिक संसाधन तथा विज्ञान और प्रौद्योगिकी से प्राप्त लाभ विकसित और विकासशील देशों को बराबर नहीं मिल रहे हैं,
- विकासशील देशों की "नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था" की कामना का महत्व समझ सकेंगे,
- आत्मनिर्भर होने की विकासशील देशों की आकांक्षा का महत्व समझ सकेंगे, जिसके कारण उन्हें अपने निर्णय अपने आप लेनें और काम करने की स्वतंत्रता मिलती है।

32.2 सभी के लिए समृद्धि की खोज

पूरे मानव इतिहास में यह खोज हमेशा से जारी रही है कि एक ऐसा समाज बने जिसमें सभी

बुनियादी सुविधाएँ मिलें। लेकिन कुछ समाजवादी देशों को छोड़ कर, अन्य देश इस लक्ष्य को नहीं पा सके हैं। समाजवादी देशों में भी ऐसा कुछ हद तक ही हो पाया है। इसीलिए हमारे गणराज्य के निर्माता चाहते थे कि भारत धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक होने के साथ-साथ एक समाजवादी और कल्याणकारी राज्य बने। जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं, ऐसा नहीं होता कि अगर किसी समाज में विज्ञान और प्रौद्योगिकी विकसित हों तो वहां के लोगों को खुद-ब-खुद सामाजिक न्याय और समान अधिकार मिल जाये। ये तो समाज और लोगों के लक्ष्य हैं जिन्हें पाने में विज्ञान और प्रौद्योगिकी बड़ी सहायता कर सकते हैं। 1958 में हमारी संसद ने वैज्ञानिक नीति के बारे में एक प्रस्ताव पारित किया। समझा जाता है कि इस प्रस्ताव का मसौदा हमारे प्रथम प्रधानमंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने बनाया था। प्रस्ताव में इसी बात को स्पष्ट किया गया था कि कल्याणकारी राज्य का अर्थ है, "विज्ञान और प्रौद्योगिकी की सहायता से सभी लोगों के भोजन, दवाई, वस्त्र, भवन निर्माण सामग्री और इसी प्रकार अन्य वस्तुओं की मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त उत्पादन करना।" बाद में कल्याणकारी राज्य का यह अर्थ बहुत से देशों में प्रचलित हुआ। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक वृहत् समाजवादी या कल्याणकारी राज्य बनाने जैसी कोई धारणा है ही नहीं। अतः प्रत्येक देश अपने विकास के लिए खुद पर ही निर्भर है। हालांकि संयुक्त राष्ट्र संघ या अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय (International Court of Justice) जैसे कुछ संगठन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम कर रहे हैं। गुट निरपेक्ष देशों में पूरे जोश से कुछ सिद्धांत दिए जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को नियमित करने के लिए व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। फिर भी, विश्व के देश तीन गुटों में बँटे हुए हैं।

पहले गुट में उद्योग सम्पन्न विकसित देश आते हैं, जिनमें अमरीका, फ्रांस, जापान, पश्चिम जर्मनी, इंग्लैंड आदि सम्मिलित हैं। अर्थात् वे देश जिन्होंने कई सौ वर्षों तक उपनिवेशों पर शासन किया और इन उपनिवेशों से सम्पदा और संसाधनों को ले जाने के कारण जिनका इतना विकास संभव हो पाया है। दूसरे गुट में सोवियत रूस, पूर्वी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी आदि समाजवादी देश आते हैं, जिनके आपस में व्यापारिक और राजनैतिक संबंध बहुत मज़बूत हैं। तीसरे गुट में विकासशील देश आते हैं, जिनको 'तीसरी दुनिया' के देश (Third World Countries) भी कहा जाता है। इनमें से अधिकतर पहले गुट के देशों के पूर्व उपनिवेश हैं और अभी भी व्यापार और तथाकथित 'विश्व बाज़ार' (World Market) के ज़रिये-विकसित देशों के साथ दृढ़ता से जुड़े हैं। विकसित और विकासशील देशों के बीच असमानताएँ बहुत ही अधिक हैं, और विकसित देशों के पास उन्नत स्तर के विज्ञान और प्रौद्योगिकी होने के कारण ये असमानताएँ बढ़ती ही जा रही हैं। इन असमानताओं को कई प्रकार से दिखाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि हम समाजवादी देशों को छोड़ दें तो विश्व की आय, निवेश और नौकरियों का तीन चौथाई भाग लगभग सभी अनुसंधान कार्य इन विकसित देशों के हाथ में है, लेकिन इनकी जनसंख्या पूरे विश्व की जनसंख्या की एक चौथाई ही है। अमरीका में प्रति व्यक्ति अनाज की खपत 1965 में 1550 पौंड से बढ़कर 1975 में 1900 पौंड हो गयी। यानि हर व्यक्ति के लिए अनाज की खपत में 350 पौंड की वृद्धि हुई। यह मात्रा भारत में प्रति वर्ष हर व्यक्ति की कुल खपत के बराबर है। इसी प्रकार, अमरीका में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत इतनी अधिक है कि पूरा विश्व इसी दर पर ऊर्जा खर्च करे तो इस धरती के सारे गैर-नवीकरणीय (non-renewable) संसाधन 10 वर्ष में ही समाप्त हो जायेंगे। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, ये असमानताएँ ज़्यादातर उपनिवेश काल के दौरान पैदा हुईं थीं, लेकिन एक बार आगे बढ़ जाने पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी की सहायता, से उन्नत देश और भी आगे बढ़ गये हैं और असमानताओं में लगातार वृद्धि होती जा रही है।

इन सिद्धान्तों को सबसे पहले 1956 में बांडुग में सह-अस्तित्व या पंचशील के पांच सिद्धान्तों के रूप में स्पष्ट किया गया था। इकाई 26 में आप पढ़ चुके हैं कि श्री जवाहरलाल नेहरू पंचशील के निर्माताओं में से एक थे।

32.2.1 प्रभुत्व के साधन के रूप में प्रौद्योगिकी

ज्ञान का उत्पादन और इसका पुस्तकों, अखबारों, पत्रिकाओं के ज़रिये वितरण बहुत कुछ विकसित देशों के हाथ में है। यह अनुमान है कि समाजवादी देशों को छोड़ दें तो, विज्ञान और विकास संबंधी अनुसंधानों पर खर्च किये जाने वाले कुल धन का लगभग 98 प्रतिशत भाग विकसित देश खर्च करते हैं। शेष 2 प्रतिशत खर्च भारत सहित 100 से भी अधिक विकासशील देशों के हिस्से में है।

भारत में हमारे पास कई सौ अनुसंधान प्रयोगशालाएँ हैं और इसका हमें गर्व है। लेकिन जब हम अपने कार्य की तुलना विकसित देशों के साथ करते हैं तो हमें अपनी सीमा का पता चलता है। अनुसंधान और विकास (Research and Development) पर हमारा खर्च इतना

उत्पादक नहीं है, क्योंकि इसका काफ़ी भाग कार्मिकों और प्रयोगशालाओं के रख-रखाव पर ही खर्च हो जाता है। उपकरण (equipment) जो मुख्यतः विकसित देशों से मंगाने पड़ते हैं, आधुनिकतम नहीं होते। इसके अतिरिक्त, हमारे विज्ञान और प्रौद्योगिकी, उत्पादन की प्रक्रियाओं के साथ ठीक प्रकार से नहीं जुड़े हैं। यानी हमारे समाज में उत्पादन प्रणाली अभी भी इतनी पिछड़ी हुई है कि स्वदेशी अनुसंधान पर कोई मांग नहीं रखती, ऐसी कोई समस्याएँ नहीं रखती जिन्हें सुलझाने में विज्ञान का अनुसंधान कार्य आगे बढ़े। ज़रा भी ज़रूरत पड़ने पर हम प्रौद्योगिकी, मशीनों, और अन्य उपकरणों का आयात करते हैं। यहाँ तक कि उस समय भी जबकि स्वदेशी जानकारी से ये जरूरतें पूरी हो सकती हैं।

इसके अतिरिक्त हम प्रतिभापलायन (brain drain) से भी पीड़ित हैं। यह अनुमान है कि विकासशील देशों के लगभग 10 लाख वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकीविद् (technologist) और चिकित्साशास्त्री (medical persons) विकसित देशों में रह रहे हैं और काम कर रहे हैं। इसके बहुत से कारण हैं। विकसित देशों में बेहतर चुनौतियाँ और अवसर हैं। हमारे यहां ऊंची गुणवत्ता वाले परिष्कृत विज्ञान और प्रौद्योगिकी (sophisticated science & technology) की मांग की कमी है, इसलिए इस क्षेत्र में रोज़गार के अवसर भी बहुत कम हैं। ये प्रशिक्षित मानव संसाधन जो विकसित देशों में पहुंचते हैं, इनका मूल्य हर लिहाज़ से (धन के लिहाज़ से भी) उस तमाम सहायता या ऋण आदि से कहीं अधिक है जो विकासशील देशों को उन देशों से मिलती है।

ऐसी स्थिति में क्या आश्चर्य है कि सभी नई खोजें विकसित देशों से ही निकलती हैं। ये देश प्रौद्योगिकीय चमत्कार पैदा करते हैं, और हम उनसे केवल चमत्कृत होते हैं! हर उस क्षेत्र में जिसमें हम आगे बढ़ना चाहते हैं जैसे विशेष किस्म का इस्पात, उर्वरक या वायुयान बनाना हो तो उसकी प्रौद्योगिकी के लिए हमें विकसित देशों की ओर देखना पड़ता है। यदि हम अपना माल पुरानी प्रौद्योगिकी से बनाते हैं तो उस माल को प्रतिस्पर्धी या प्रतियोगी बाज़ार में बेचना कठिन है। रक्षा उपकरणों, रेडॉरों और प्रक्षेपास्त्रों (missiles) के लिए भी यही बात है। हमें उनके उपकरणों और प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना पड़ता है, अन्यथा हम अपनी रक्षा स्वयं नहीं कर सकते।

जैसा हमने खंड 7 में पढ़ा, प्रौद्योगिकी का आयात हमारी निर्भरता को बढ़ाता है। विकसित देश इस बात को जानते हैं। इसीलिए वे अपने माल के ऊँचे दाम ही नहीं लेते बल्कि अन्य आर्थिक और कभी-कभी राजनैतिक रियायतें भी लेते हैं। उदाहरण के लिए, वे हमसे कहते हैं कि हमें मुक्त व्यापार (Free Trade) में विश्वास करना चाहिए और अपने हाल ही में शुरू हुए उद्योगों (young industry) को आर्थिक अनुदान देकर उन्हें बचाना नहीं चाहिए। वे हमसे कल्याणकारी कार्यक्रमों को घटाने के लिए कहते हैं क्योंकि उन पर किया गया खर्च 'अनुत्पादक' (unproductive) है। दूसरी ओर वे अपने स्वयं के उद्योगों को बचाते हैं और बाज़ारों को इस प्रकार नियंत्रित करते हैं कि हमारे कच्चे माल का कम दाम लगे, जबकि उनके तैयार माल (finished goods) को ऊँचा मूल्य मिले।

उन्नत देशों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का जिन क्षेत्रों में विकास किया जा रहा है, उनमें बहुत से क्षेत्र विकासशील देशों में हैं ही नहीं। यहां तक कि हमारे जैसा देश भी, जो कुछ विकसित है, गोपनीयता के कारण या तकनीकें बहुत अधिक परिष्कृत होने के कारण, विज्ञान के बहुत से क्षेत्रों में हुए प्रमुख विकास का पूरा लाभ नहीं उठा सकता। विकसित देश सिन्थेटिक्स, प्लास्टिक, फ़ाइबर्स, कांच आदि पर प्रति वर्ष अरबों डालर खर्च करते हैं। इनके कारण बहुधा विकासशील देशों द्वारा उत्पादित रबर, कपास, टिन, वनस्पति तेल आदि कच्चे माल की मांग कम होती जा रही है।

इसके अतिरिक्त, विकसित देशों में जिन प्रौद्योगिकियों का प्रयोग किया जा रहा है, वे पूँजी प्रधान (Capital Intensive) हैं। और उनमें काफ़ी कम श्रम का प्रयोग किया जाता है। अतः ऐसी प्रौद्योगिकियों का आयात करने से हमारी पूँजी अधिक खर्च होती है, हमारे श्रमिक बल का कम उपयोग होता है और हमारे माल की लागत इतनी अधिक आती है कि उनको ऊँचे दामों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में बेचा नहीं जा सकता। अतः उन्नत देशों में बेहतर गुणवत्ता वाले विज्ञान और प्रौद्योगिकी का हमारे विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा है। इससे हमारा पिछड़ापन बरकरार रहा है। हालांकि हमारे समाज के कुछ गिने-चुने लोगों को फ़ायदा ज़रूर हुआ है।

बोध प्रश्न 1

आप समाचार पत्र अवश्य पढ़ते होंगे। क्या आप ऐसे हाल ही के दो मामले बता सकते हैं जिनमें प्रौद्योगिकी का आयात किया गया है? नीचे दिये स्थान पर अपना उत्तर लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

32.3 नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था

अधिकतर विकासशील देशों ने उपनिवेश का जुआ 1950वें दशक में उतार कर फेंक दिया। वे 30 वर्षों या उससे भी अधिक समय से अपने पैरों पर खड़े होने के लिए जूझ रहे हैं और ऐसा विकास करने की कोशिश कर रहे हैं जिससे उनके सभी लोगों को लाभ हो। आप समझ गये होंगे कि समय की मांग है कि विकास ऐसा हो जो राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ विकासशील देशों के आम लोगों की आकांक्षाओं को भी पूरा करे। अब तक इन देशों में गरीबी, अज्ञानता, स्वास्थ्य की कमी और बेरोज़गारी आदि काफ़ी बढ़ गये हैं और जनसंख्या का बड़ा भाग असीम दुर्दशा का शिकार हुआ है। ये समस्याएँ दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही हैं। यह भी जानते हैं कि जनसंख्या की विस्फोटक वृद्धि और पर्यावरण पर बढ़ते हुए दबाव का कारण है—मानव के चतुर्मखी विकास के लिए संसाधनों की कमी। बहुत से देशों ने ऐसे समाज की रचना करने का प्रयास किया है, जहाँ सभी लोगों की बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करना, विकास का प्राथमिक लक्ष्य है। लेकिन ऐसा विकास हमारे यहां अभी तक संभव नहीं हुआ है।

अपनी राष्ट्रीय आवश्यकताओं और आकांक्षाओं की संगत नीति हम अभी तक नहीं बना पाये हैं। आज के, एक दूसरे पर पूरी तरह आश्रित विश्व में, बहुत से शक्तिशाली देशों के युद्ध, उद्योग और व्यापार संबंधी हित में आपस में एक दूसरे से टकराते हैं। अनुभव बताता है कि हालात से मज़बूर होकर अक्सर ही विकासशील देशों को ऐसे काम करने पड़ते हैं, जो विकसित देशों के लिए अधिक लाभदायक रहते हैं। उदाहरण स्वरूप, अपनी रक्षा करने के लिए हमें आधुनिक हथियार विकसित देशों से खरीदने पड़ते हैं। फिर जब ये उन्नत देश नये हथियार बनाते हैं तो अपने पुराने हथियारों के स्थान पर विकासशील देशों को वे नये हथियार खरीदने पड़ते हैं, इसी प्रकार हम उनसे आधुनिकतम वस्तुएँ खरीदते हैं या उन वस्तुओं को बनाने के लिए प्रौद्योगिकियों का आयात करते हैं। यहाँ तक कि जो वस्तुएँ हम खुद बनाते हैं, उनका निर्यात भी हमें विकसित देशों द्वारा निर्धारित मूल्य पर ही करना पड़ता है। इसलिए यदि विकासशील देश जीवन स्तर की खराब स्थिति से उभरना चाहें भी तो उन्हें यह असम्भव सा लगता है।

इन्हीं सब बातों को देखते हुए विकासशील देश विकास का बिल्कुल ही भिन्न मार्ग अपनाने के लिए सोचने लगे हैं। अर्थात् विकास का ऐसा रास्ता जो उन रास्तों का अनुकरण न हो जिनसे विकसित देश गुज़रे हैं। इस प्रयोजन के लिए 'वैकल्पिक विकास नीतियाँ' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इस तरह हम किसी की नकल नहीं कर रहे होंगे और अपने लोगों की तत्काल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपना मार्ग स्वयं ढूँढ रहे होंगे।

हम ऐसी नई आर्थिक और राजनैतिक प्रणाली बनाना चाहेंगे जो स्पर्धा और उद्यम के साथ-साथ मानव कल्याण और योजनाबद्ध विकास को आगे बढ़ाने में समर्थ होगी। एक ऐसी नीति बनानी होगी जिसमें विकास की योजना, दिशा और गति दृढ़ता से राष्ट्रीय नियंत्रण में होगी। नीति बनाये जाने के पश्चात् उत्पादन को दुबारा व्यवस्थित करने, संसाधनों को जुटाने और सभी संगत क्षेत्रों में उन्हें बांटने की योजना बनाने की आवश्यकता होगी। विज्ञान और प्रौद्योगिकी को ऐसा स्वरूप देने के लिए कदम उठाने होंगे जिसका प्रयोग राष्ट्रीय विकास के हित में हो।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसी भावनाएँ इतनी प्रबल थीं कि 1974 में संयुक्त राष्ट्र ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसे "नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था घोषणा और कार्यान्वयन का कार्यक्रम" कहा गया। हम यहाँ आपको इसके बारे में बहुत ही संक्षेप में बतायेंगे जिससे आपको आजकल की परिस्थिति का पता चल जायेगा।

इस प्रस्ताव के अनुच्छेद 1 के अनुसार पिछले दशकों के दौरान सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि राष्ट्रों और बड़ी संख्या में लोगों को उपनिवेश और विदेशी प्रभुत्व से मुक्ति मिली है जिसके कारण वे स्वतंत्र मनुष्यों के समुदायों के सदस्य बन पाये हैं। पिछले तीन दशकों में आर्थिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में प्रौद्योगिक प्रगति भी हुई है। इस प्रकार सभी लोगों का जीवन स्तर अच्छा बनाने के लिए ताकत मिली है। लेकिन विदेशी और उपनिवेशी प्रभुत्व के अवशेष, विदेशी कब्ज़ा, जातीय भेदभाव, रंगभेद नीति और अपने सभी रूपों में उपनिवेशवाद, आज भी विकासशील देशों और उनसे सम्बद्ध सभी लोगों की पूर्ण स्वतंत्रता और प्रगति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधाएँ हैं। प्रौद्योगिक प्रगति के लाभ अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सभी सदस्यों को बराबर-बराबर नहीं मिल रहे हैं। विकासशील देशों को, जो विश्व की कुल जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग है, विश्व की आय न केवल 30 प्रतिशत भाग ही मिलता है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का समान और संतुलित विकास असंभव सिद्ध हुआ है। ऐसी प्रणाली में विकसित और विकासशील देशों के बीच अन्तर लगातार बढ़ता ही जा रहा है, क्योंकि यह प्रणाली उस समय बनायी गयी थी, जब अधिकांश विकासशील देश स्वतंत्र राज्य के रूप में थे ही नहीं और इसी से असमानता कायम है।

अनुच्छेद 4 उन सिद्धान्तों की व्याख्या करता है, जिनके आधार पर नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था बनायी जा सकती है। उदाहरण के लिए "नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित होगी।..... प्रत्येक राज्य का अपने प्राकृतिक संसाधनों और सभी आर्थिक गतिविधियों पर पूर्ण स्थायी आधिपत्य होगा। इस संसाधनों को सुरक्षित रखने के लिए, प्रत्येक राज्य को उन पर पूरा प्रभावी नियंत्रण रखने और अपनी परिस्थितियों के लिए उपयुक्त साधनों द्वारा उनका उपभोग करने का अधिकार होगा, जिसमें राष्ट्रीयकरण या अपने देशवासियों को उनका स्वामित्व देने का अधिकार भी शामिल है। यह अधिकार राज्य की पूर्ण स्थायी प्रभुसत्ता को प्रदर्शित करता है। इस अविच्छिन्न अधिकार को स्वतंत्र और पूर्ण रूप से लागू करने में किसी भी राज्य के साथ आर्थिक, राजनैतिक या अन्य किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं की जायेगी" इसके अतिरिक्त, "विकासशील देशों के साथ व्यापार की असन्तोषजनक शर्तों में लगातार सुधार लाने और विश्व की अर्थव्यवस्था का विस्तार करने के दृष्टिकोण से विकासशील देशों द्वारा निर्यात किये जाने वाले कच्चे माल, प्राथमिक उत्पादों, निर्मित और अर्धनिर्मित माल के दामों, और उनके द्वारा आयात किये जाने वाले कच्चे माल, प्राथमिक उत्पादों, पूँजीगत माल, और उपकरण आदि के दामों के बीच न्यायोचित और बराबरी का संबंध।"

इससे आपको अन्दाज़ हो जाना चाहिए कि आजकल विश्व आर्थिक संबंधों की क्या स्थिति है। यह स्थिति उन देशों के लिए लाभदायक नहीं है, जिनके उद्योग विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सामाजिक विकास को अब आगे बढ़ना है।

बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरें।

i) वर्तमान ..... के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का ..... और ..... विकास प्राप्त करना ..... सिद्ध हुआ है।

ii) नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था प्रत्येक राज्य के अपने ..... और सभी ..... पर पूर्ण ..... के ..... पर स्थापित की जानी चाहिए।

32.4 खंडित अवधारणाएं

अनुभव से पता चला है कि कुछ विचार जो दूसरे विश्वयुद्ध (1939-1945) के तुरन्त बाद लोकप्रिय हुए थे, व्यवहार में सही नहीं सिद्ध हुए। उदाहरण के लिए यह विश्वास किया जाता

था कि पूर्व-उपनिवेशी देश अपने समाजों, दृष्टिकोणों, मूल्यों, सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थानों तथा आर्थिक ढाँचे में धीरे-धीरे वही सब बातें अपना लेंगे, जो उत्तरी अमरीका, यूरोप, सोवियत यूनियन या जापान इत्यादि देशों में पिछले 50 या 100 वर्षों में अपनायी गयी थीं। यह सोचा गया था कि उद्योग उन्नत देश या विकसित देश एक "बैंक" के रूप में काम करेंगे जिनसे पूँजी, कार्यकुशलता, प्रौद्योगिकी और प्रबंध, 'सहायता' के रूप में लिये जा सकते हैं जिससे विकासशील देशों में जीवन खुशहाल बन सकेगा। वैज्ञानिकों की यह आम धारणा थी कि लोगों की भलाई के लिए आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी का हमारे विकासशील देशों की ओर स्वतंत्र प्रवाह हो सकेगा। ये विचार या धारणाएँ अब खंडित हो गयी हैं, क्योंकि ये झूठी सिद्ध हुई हैं।

आत्मनिर्भरता पर पगवाँश नामक एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय विचार गोष्ठी में कहा गया, "सच्चाई यह है कि तथाकथित विश्वव्यापी औद्योगिक क्रान्ति की कल्पना, योजना और कार्यान्वयन इसलिए किया गया था कि उद्योग-उन्नत देशों की सुरक्षा और आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। साथ ही ऐसी व्यवस्था से बुनियादी संसाधनों की अत्यधिक कमी हुई है और इनके प्रयोग और वितरण में गंभीर रूप से असमानताएँ बढ़ गयी हैं। इनका बड़ा हिस्सा उद्योग उन्नत देशों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है।

पगवाँश वैज्ञानिकों का एक विश्व-व्यापी आंदोलन है, जिसकी शुरुआत एल्बर्ट-आइन्स्टीन और बर्ट्रेंड रसेल के के विचारों से हुई।

इस संबंध में यह तथ्य याद रखना हमारे लिए अच्छा रहेगा कि मानव प्रगति की कुंजी है—ज्ञान। जब हम आज़ाद हुए तब विकसित देश, हमारे देश में ज्ञान के प्रसार को रोकने की स्थिति में तो नहीं रहे। लेकिन फिर भी उन्होंने अपने और हमारे लिए उपलब्ध ज्ञान के स्तर पर अंतर बनाये रखने में बड़ी भूमिका निभाई है। आपने इकाई 28 में एकस्व (patent) कानून के बार में पढ़ा है जो ज्ञात विधि द्वारा कुछ भी बनाने से हमें रोकता है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी में भी, संभावित उपयोग के कारण, ज्ञान के प्रसार पर रोक लगा दी गई है ताकि विकासशील देश नए किस्म के उत्पाद बनाने में सफल न हों। कुछ व्यापार रहस्य (trade secrets) तो होते ही हैं, साथ ही साथ नई वैज्ञानिक प्रौद्योगिक खोजों के बारे में जानकारी के फैलने पर सरकारी प्रतिबंध लगा है। उदाहरण के लिए सुपर चालकता (super conductivity) के अनुसंधान पर, जिसके बारे में आप इकाई 30 में पढ़ चुके हैं, जो कुछ भी आज वैज्ञानिक पत्रिकाओं में छपता है, वह विकसित देशों की प्रयोगशालाओं में की गयी खोजों का एक छोटा सा भाग ही है, बायोटेक्नॉलाजी, लेसर, नाभिकीय विज्ञान, इलेक्ट्रॉनिक्स और बहुत से उभरते हुए क्षेत्रों की भी यही स्थिति है। विकसित देश नहीं चाहते कि हम कुछ सिद्धान्तों या विचारों को ऐसे उत्पाद के रूप में बदल सकें जो उनके देशों के बाज़ार में पहुँच जाएँ या हमारे बाज़ारों के दरवाज़े उनके लिए बन्द हो जाएँ।

इतना ही नहीं, कई उदाहरण ऐसे हैं जिनसे पता चलता है कि हमारे जैसा विकासशील देश यदि किसी विशेष क्षेत्र में अपनी प्रौद्योगिकी विकसित कर लेता है, तो उसको विफल करने की भरपूर कोशिश की जाती है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जब अन्तिम क्षण पर उत्पाद का आयात करके हमारे देश में अनुसंधानकर्ताओं की लगन से की गई कोशिशों को बेकार कर दिया गया।

32.5 आत्मनिर्भरता

विज्ञान और प्रौद्योगिकी और राष्ट्रीय विकास के बारे में इस कटु वास्तविकता या इससे मिली शिक्षा के आधार पर 'आत्मनिर्भरता' की एक नई संकल्पना उभर कर सामने आयी है विशेषतः विकासशील देशों या तीसरे विश्व के देशों के बीच। यह महसूस किया गया है कि विकासशील देशों के लिए कार्य करने की स्वतंत्रता बहुत महत्वपूर्ण है, जो निर्भरता की स्थिति में संभव नहीं है। क्योंकि इस स्थिति में लाभ पाने वाला व्यक्ति या राष्ट्र हमेशा लाभ देने वाले की दया पर निर्भर रहता है। इसलिए देश को समन्वित तरीके से अपने विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अर्थव्यवस्था को इस प्रकार ढालना पड़ेगा जिससे वह बाहरी दबावों में न आकर, अपने हित को देखते हुए निर्णय ले सके और उन निर्णयों के अनुसार काम कर सके।

आत्मनिर्भरता को एक ऐसी मानसिक अवस्था भी कहा जा सकता है जो अपने भाग्य को स्वयं बनाने की योग्यता में विश्वास की भावना पैदा करती है। इस विचार को भिन्न-भिन्न प्रकार से

व्यक्त करके भिन्न-भिन्न अर्थ दिए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि हमारे पास कई आर्थिक या सामाजिक उद्देश्यों में से कुछ को चुनने का अधिकार है तो हमें उन्हीं लक्ष्यों को प्राथमिकता देनी चाहिए जिन्हें दूसरे देशों पर अधिक निर्भर हुए बिना पूरा किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि उद्योग लगाने हों तो वे उद्योग ही लगाने चाहिए जो हम अपने प्रयासों से लगा सकते हैं। ठीक इसी प्रकार प्रौद्योगिकियों में से चुनाव करना हो तो वही प्रौद्योगिकी अपनानी चाहिए जो हमारे देश में ही उपलब्ध हो। इसी प्रकार से अन्य कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। स्वाभाविक है कि इन सब के लिए हमें अपने संस्थानों में उपयुक्त शिक्षा, प्रशिक्षण और अनुसंधान के आधार पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के निरंतर विकास की व्यवस्था करनी होगी। इस तरह विकल्पों का क्षेत्र जहाँ से हम अपने हित के अनुसार विकल्प चुन सकें, निरन्तर बढ़ता रहना चाहिए।

प्रत्येक देश को अपनी आज़ादी मजबूत करने के लिए और अपनी आंतरिक क्षमता से अपनी समस्याएँ सुलझाने के लिए अपने ही मार्ग पर चलना चाहिए। दूसरों के अनुभवों से मदद तो मिलती है, लेकिन हर एक को अपनी योग्यता का खुद ही पता लगाना चाहिए, योग्यता के अनुसार चुनाव करना चाहिए और निर्णय लेना चाहिए कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। यदि हम महसूस करते हैं कि हमारी दृष्टि आत्मनिर्भरता की लगी है तो हम कोई भी गलत कदम नहीं उठा सकते। स्वतंत्रता का विरोध एक दूसरे पर निर्भर रहने से नहीं है, न ही आत्मनिर्भरता का सहयोग से विरोध है। लेकिन ये सारे संबंध बराबरी और एक दूसरे के प्रति सम्मान पर आधारित होने चाहिए।

– इन्दिरा गांधी

आत्मनिर्भरता का यह अर्थ नहीं है कि हम अपने आप को विश्व के विज्ञान और प्रौद्योगिकी से बिल्कुल ही अलग कर लें, या जो कुछ भी अनिवार्य है या जिससे बचा नहीं जा सकता उसका भी आयात बन्द कर दें। इसका अर्थ यह है कि जिन चीज़ों के आयात से हम बच सकते हैं उन्हें बनाने के लिए निरन्तर कोशिश करें और उसके लिए सही योजना बनायें। तात्पर्य यह है कि विलास की वस्तुओं को देश के अन्दर बनाये जाने या आयातित करने को सबसे कम प्राथमिकता दी जानी चाहिए। रेलगाड़ियों को 200 किलोमीटर प्रति घंटे की चाल से चलाने की अभी इतनी आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसके लिए समान और प्रौद्योगिकी का आयात करना होगा। इससे अधिक आवश्यकता है, ज़्यादा रेलगाड़ियाँ चलाने की या हमारे देश के दूर दराज़ क्षेत्रों के लिए नए-नए रास्ते खोलने की। देश की सुरक्षा के मामले में निरन्तर प्रगति करने वाली हमारी प्रौद्योगिकी द्वारा हम जो कुछ भी बना सकते हैं उसका कार्यक्षेत्र बढ़ाना चाहिए और इसके अतिरिक्त अगर हम कुछ चीजें नहीं बना सकते और आज की स्थिति को देखते हुए उनकी आवश्यकता है, तो उनका आयात करना चाहिए। उदाहरण के लिए, जब हम मिग 21 लड़ाकू विमान बनाने के लिए सोवियत सहायता से फैक्टरियाँ लगाते हैं तब इसमें सुधार करने के लिए अनुसंधान और विकास गतिविधियों पर भी ध्यान देना चाहिए ताकि विमान का नया डिज़ाइन जब भी सामने आये, उसमें हमारी अपनी प्रौद्योगिकी का अधिक से अधिक योगदान हो।

शायद आप समझ सकते हैं कि आत्मनिर्भरता एक ऐसी नीति है जो आम जनता के बड़े तबके की समस्याओं को हल करने के लिए बहुत ही उपयुक्त है। हमारे देश की 70% जनता गावों में रहती है। और शायद ही ऐसी चीजों का प्रयोग करती है जिसमें आयातित माल या प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होती है। भले ही आज हम दालों और खाद्य तेलों का भी आयात करते हैं, लेकिन इनका उत्पादन हम आसानी से बढ़ा सकते हैं। हमारे देशवासियों को इतने अधिक किस्म के टूथ पेस्ट, शैम्पू, इलेक्ट्रिक शेवर आदि की आवश्यकता नहीं है, जितनी भोजन, औषधि, वस्त्र, आश्रय और ऐसी ही वस्तुओं की है। इसलिए उनका जीवन स्तर बेहतर बनाने के लिए किए गए आर्थिक और प्रौद्योगिक प्रयासों में, दूसरे देशों के सामने झुकने की आवश्यकता नहीं है और न ही उनके प्रलोभनों और दबावों में आने की या विदेशी मुद्रा की आवश्यकता है। दूसरी ओर यह अवश्य है कि आम लोगों का जीवन स्तर बेहतर बनने से लोगों में संतोष की भावना यकीनन बढ़ेगी और इससे राष्ट्र मज़बूत बनेगा जिससे हमारी अंदरूनी शक्ति बढ़ेगी। यह कहना न्यायोचित होगा कि ऐसी आत्मनिर्भरता हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के उपदेशों के अनुसार होगी जिसका उन्होंने अपने जीवन में भी पालन किया। उन्होंने इसके लिए 'स्वदेशी' शब्द का प्रयोग किया था।

हमारे स्वाधीनता आन्दोलन में 'स्वदेशी' का प्रचार एक महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक हथियार था। आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने और आम लोगों के कल्याण के अलावा इसके कारण एक जागरूकता आयी जिसकी वजह से भारतीयों में शक्ति और एकता की भावना जागी और इन सबसे ऊपर अपनी संस्कृति और परम्परा के प्रति गहरा स्नेह और सम्मान पैदा हुआ। गांधी जी ने इस किस्म के हथियार का प्रयोग जिला स्तर से लेकर नीचे ग्राम स्तर तक किया, और इससे पूरा देश जाग उठा।

आप शायद समझ सकेंगे कि जिस किस्म की चर्चा हम कर रहे हैं उसमें विकल्पों का चुनाव और उनका क्रियान्वयन विभिन्न स्तरों पर करना होगा–व्यक्ति के स्तर पर (आत्म-विश्वास जगाने और पूर्ण व्यक्तित्व विकसित करने के लिए), गांव, जिले और राज्य के स्तर पर, या खेतों, कारखानों, स्कूलों, अनुसंधान संस्थानों के स्तर पर। अतः इसे एक ऐसे आन्दोलन के रूप में चलाना होगा जिसमें तमाम जन समुदाय भाग ले और पूरे देश के लिए विकास की नई नीति बन सके।

32.5.1 राष्ट्रीय विकास के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी

विज्ञान और प्रौद्योगिकी प्रमुख राष्ट्रीय संसाधन हैं और आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए अनिवार्य हैं। आत्मनिर्भरता के उपरोक्त आदर्शों के लिए राष्ट्रीय विकास में विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्या भूमिका अदा कर सकते हैं? जैसा कि आप जानते हैं, सभी के लिए भोजन, आश्रय, वस्त्र, स्वास्थ्य और शिक्षा आज भी हमारे समाज की सबसे ज़रूरी आवश्यकताएँ हैं। इन आवश्यकताओं को तेज़ी से पूरा करने के लिए कृषि, खाद्य-पदार्थ प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य विज्ञान और चिकित्सा, भवन-निर्माण सामग्री, वस्त्र, नये संसाधन आदि खोजने में नये विकास की ज़रूरत है। हमारे समाज या हमारी अर्थव्यवस्था से संबंधित समस्याओं के हल निकालना हमारी वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक गतिविधियों के सामने एक मूलभूत चुनौती है और इसी चुनौती का सामना करने में नये प्रश्न और नये उत्तर, नयी प्रौद्योगिकियाँ और वैज्ञानिक कार्यों के नये क्षेत्र अवश्य ही उभरेंगे। इस प्रयास में आयी समस्याओं को सुलझाने में निश्चय की संसाधनों के साथ-साथ श्रम, कौशल, प्रवीणता और मानव क्षमता की ज़रूरत पड़ेगी।

भारत में हमारे पास प्राकृतिक संसाधनों और प्रखर बुद्धि वाले लोगों की प्रचुर शक्ति है। हमारे यहाँ लोकतांत्रिक प्रणाली भी है जहाँ पर विचारों की परख की जा सकती है और सबसे उत्तम विचार पर अमल किया जा सकता है। बस काम यह है कि सभी प्रकार के ज्ञान की चाहे वह सामाजिक विज्ञान हो, प्राकृतिक विज्ञान या प्रौद्योगिकी, अधिक से अधिक लोगों को उपलब्ध कराकर उसे उपयोगी बनाना है। हमारे समाज में शिक्षा के सभी स्तरों पर ऐसे रचनात्मक और आलोचनात्मक चिंतक बनाने की आवश्यकता है, जो वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करके, संबंधित आंकड़ों और समस्याओं के आधार पर सामाजिक वास्तविकता पर प्रश्न उठा सकते हैं। उन विचारों को फिर से परखने की आवश्यकता है जिनको जनता ने और हमारे समाज में राजनैतिक और प्रशासनिक व्यवस्था ने बिना आलोचना के स्वीकार कर लिया था। अल्प विकास के इस विषम चक्र से बाहर निकलने के काम को कम महत्व नहीं देना चाहिए। समाजों के वर्तमान ढाँचे, उनके व्यापार, और उद्योगों की स्थापना में और लाभ के वितरण में, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, और ज्ञान के अन्य क्षेत्रों ने गहरी भूमिका निभाई है। हम आशा करते हैं कि ये हमारे देश को भावी विकास के सही मार्ग पर ले जाने के लिए सफल भूमिका निभाएंगे।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों पर उपयुक्त शब्द लिखें:

i) आत्मनिर्भरता एक ऐसी ..... अवस्था है जिससे व्यक्ति में ..... बढ़ता है।

ii) ..... की स्थिति में .... करने की स्वतंत्रता असंभव है।

iii) आत्मनिर्भरता के लिए हमारे ..... विकास को ..... और ..... द्वारा मजबूत बनाना होगा।

32.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि समतावादी और न्यायपूर्ण समाज के लिए मानव की चिरकालीन खोज के बावजूद, संसार आज बहुत ही भिन्न तस्वीर पेश करता है। यहाँ धनी विकसित देश हैं, जो विश्व के अधिकांश संसाधनों तथा वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान पर नियंत्रण रखते हैं। यहाँ निर्धन विकासशील देश भी हैं जो ज्ञान के अभाव के कारण अपनी भलाई के लिए अपने ही संसाधनों का उपयोग करने में असमर्थ हैं, या विज्ञान और प्रौद्योगिकी के फायदों को अधिकांश जनता तक नहीं पहुंचा पाते हैं। इस बात को समझते हुए विकासशील देशों ने संसाधनों और ज्ञान की बराबर भागीदारी के आधार पर नयी अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था बनाने की मांग की है। वे आत्मनिर्भर होना चाहते हैं ताकि उनको सही विकल्प का चयन करने और कार्य करने की स्वतंत्रता हो, और वे विकास का ऐसा मार्ग बना सकें जहाँ अपनी जनता को ऊपर उठाने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर सकें।

32.7 अंत में कुछ प्रश्न

1 नयी अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सार संक्षेप में बताइए। भारत इससे किस प्रकार लाभ उठा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2 क) आत्मनिर्भरता के लिए आवश्यक बातें क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

ख) उन दो क्षेत्रों के नाम बताइए जहां हम आयातित प्रौद्योगिकी या जानकारी पर निर्भर नहीं है।

.....

.....

32.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1 वायुयान, कंप्यूटर, रंगीन टी.वी. इत्यादि

2 i) अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था, एक जैसा, संतुलित, असंभव,

ii) प्राकृतिक संसाधनों, आर्थिक कार्यक्रमों, प्रभुसत्ता, सिद्धान्त

3 i) मानसिक, आत्मविश्वास,

ii) निर्भरता, काम

iii) वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी, उपयुक्त शिक्षा, प्रशिक्षण अनुसंधान।

अन्त में कुछ प्रश्न

1 अंतर्राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की घोषणा यू.एन.ओ. द्वारा 1974 में की गई थी। इस घोषणा में शामिल हैं:

- उपनिवेशी और विदेशी प्रभुत्व से स्वतंत्रता।
- प्रौद्योगिक प्रगति और इसका वितरण।
- अपने प्राकृतिक संसाधनों और सभी आर्थिक गतिविधियों पर प्रत्येक राज्य की प्रभुसत्ता।

- विश्व अर्थ-व्यवस्था के विस्तार और व्यापार के लिए बेहतर शर्तें और परिस्थितियाँ।
- कच्चे माल, प्राथमिक उत्पादों, पूँजीगत सामान इत्यादि के आयात निर्यात के लिए न्यायोचित मूल्य।

चूंकि भारत भी विकसित देशों को माल का निर्यात करता है और उनसे माल का आयात भी करता है, इन चीज़ों के न्यायोचित मूल्य नियत करने से हमारे देश की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा।

(इन निर्देशों के अनुसार अपना उत्तर विस्तार में दे सकते हैं।)

2 क) आत्म विश्वास का विकास
काम करने की स्वतंत्रता और निर्णयों को बिना किसी पर निर्भर हुए लागू करना (स्वतंत्र रूप से कार्यान्वयन)
अपने हित के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अर्थ-व्यवस्था में प्रगति।

ख) रेलगाड़ियाँ, एच.एम.टी. घड़ियाँ, इत्यादि।

उपसंहार

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस आधार पाठ्यक्रम में हमने बहुत सी बातों का अध्ययन किया है। हमने मानव के सतत् प्रयास के रुप में विज्ञान पर कुछ टिप्पणियों के साथ शुरुआत की और बताया कि इसकी वृद्धि सभ्यता के साथ गुंथी हुई है। हमने भारत के विशेष संदर्भ में विज्ञान के इतिहास की एक झलक आपको दी। हमने इसकी समाप्ति वैज्ञानिक पद्धति और विज्ञान के विशिष्ट स्वरूप पर, कुछ कथनों द्वारा की।

इसके बाद हमने आधुनिक भारत के नागरिक के दृष्टिकोण से कुछ विशिष्ट, आकर्षक और महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर विचार किया। इन क्षेत्रों के चुनाव में हमने कुछ स्वच्छन्दता ज़रूर बरती। हमने व्यापक संदर्भ में पृथ्वी की स्थिति का निर्धारण करने के लिए ब्रह्मांड के बारे में चर्चा की। फिर हमने जीवन के उद्भव और मानव के विकास तक तमाम जीवों के विकास की चर्चा की। हमने आपके साथ अपने आवास पृथ्वी के पारिस्थितिक तंत्र, पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों की छान-बीन की।

भोजन कृषि, स्वास्थ्य और रोग हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण विषय हैं, और इसलिए इन विषयों से संबधित कुछ बारीकियों तथा सामाजिक और आर्थिक समस्याओं से आपको अवगत कराया। हमने संक्षेप में मस्तिष्क और शरीर जैसे रोचक विषय की भी जानकारी दी जिसके कारण आपको मनोविज्ञान की झलक मिली। इसी के साथ, मनुष्य को जिस शक्तिशाली संचार माध्यम की ज़रूरत है और जिसका वह भरपूर इस्तेमाल करता है, उसकी चर्चा की। इन सबके बाद हम पहुँचे विज्ञान, प्रौद्योगिकी, औद्योगिक और आर्थिक विकास से जुड़े सामयिक प्रश्नों पर। इसी के साथ हमने निकट भविष्य में इस्तेमाल में आने वाली कुछ आधुनिक प्रौद्योगिकी की झलक देखी।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी का यह व्यापक सर्वेक्षण युवा पाठकों के लिए किया गया है, जिन्हें शायद विज्ञान की जानकारी न हो, सिवाय उसके जो थोड़ी-बहुत समाचार-पत्र या रेडियो के जरिए उन्हें मिली हो। इस सर्वेक्षण से हमने यह जाना कि चीज़ों के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण वस्तुपरक, तर्कसंगत और सदैव परिवर्तनशील होता है। हम इस तथ्य को महत्व देने में भी नहीं चूके हैं कि विज्ञान ज्ञान का एक अमूर्त (abstract) रूप नहीं है, इसका संबंध वास्तविकता से है। यह पर्यावरण से मस्तिष्क और शरीर तक, और मानव समाज से संबंधित किसी भी रूप में विद्यमान वास्तविकताओं का ज्ञान है। स्वयं वास्तविकता का ही एक अंग होने के कारण, विज्ञान भीतर से ही भौतिक और सामाजिक वास्तविकताओं में परिवर्तन कर सकता है।

जब यहाँ सामाजिक वास्तबिकता के साथ विज्ञान के संबंध की चर्चा हुई है तो इस वास्तविकता को समझने में निश्चय ही लेखकों का दृष्टिकोण या विश्व के प्रति उनका नजरिया उभरा है। इससे तो बचा ही नहीं जा सकता। इसलिए इस सर्वेक्षण में भारतीय समाज और इसकी समस्याओं के प्रति या अन्य काई बातों में जैसे उपनिवेशवाद ने उन देशों में क्या किया जहाँ इनका शासन था, या संचार के साधनों में आम लोगों के विचारों को नियमित करने में क्या भूमिका निभाई, दरअसल सब में हमारा दृष्टिकोण उपस्थित रहा है। यदि हमारा कोई दृष्टिकोण न होता या हमने उसे दबा दिया होता तो हम आपको व्यर्थ की तस्वीर देकर आपके साथ बड़ा अन्याय करते। हम आपके सामने आंकड़े, तालिकाएँ, चार्ट, लोगों के वक्तव्य और अलग-अलग विवरण इत्यादि रखते जिनमें कोई संदेश न होता, जिनका कोई सार, कोई अर्थ न होता। कुछ लेखक ऐसा कर सकते हैं, लेकिन उन पर हर मुद्दे को उलझाने का दोष भी लगाया जा सकता है जो शायद वे किसी प्रयोजन के कारण करते हैं।

लेकिन इस सबके साथ हमने लगातार आपसे यह आग्रह भी किया है कि आप खुद भी इन बातों पर सोचें, जो विषय-सामग्री हमने आपके सामने पेश की उसका आलोचनात्मक विश्लेषण करें और इनसे संबंधित अपने विचार स्वयं ही बनाएं। इसे पढ़ने के बाद आप इनमें से कुछ विषयों का और आगे अध्ययन करना चाहेंगे और वही हम सब के लिए एक वास्तविक उपलब्धि होगी।

हम इस पाठ्यक्रम की समाप्ति कई प्रकार से कर सकते हैं, लेकिन हमने इसके लिए श्री जवाहरलाल नेहरू का एक कथन चुना है। श्री जवाहरलाल नेहरू न केवल एक चिंतक, वैज्ञानिक और हमारे देश के सबसे प्यारे नेताओं में से एक आधुनिक भारत के निर्माता थे

बल्कि वे मत्रमुग्ध करने वाले ऐसे वक्ता थे जिन्होंने अपनी सुन्दर कल्पनाओं से लोगों का दिल जीत लिया।

'यद्यपि मैं एक लम्बे समय तक भारतीय राजनीति के रथ में जुता एक गुलाम रहा हूँ जबकि मेरे पास अन्य विचारों के लिए खाली समय बहुत कम था, फिर भी मेरा मन प्रायः उन दिनों की याद में भटकता है जब मैं एक विद्यार्थी के रूप में विज्ञान के गृह, कैम्ब्रिज की प्रयोगशालाओं में काम करता था और यद्यपि परिस्थितिवश में विज्ञान से दूर हो गया, मेरे विचार हमेशा ही विज्ञान की ओर मुड़ते रहे। बाद के वर्षों में, घुमावदार रास्तों से गुज़रता हुआ मैं फिर विज्ञान तक पहुँचा जब मैंने जाना कि विज्ञान केवल एक सुखद विषयांतर या सिर्फ अमूर्त ज्ञान नहीं था बल्कि जीवन से, गहराई से जुड़ा एक ताना बाना है, जिसके बिना हमारा यह आधुनिक संसार गायब ही हो जाएगा। राजनीति मुझे अर्थशास्त्र की ओर ले गयी और वह मुझे अनिवार्यतः विज्ञान की ओर तथा अपनी समस्याओं तथा जीवन के प्रति एक वैज्ञानिक समझ की ओर ले गया। यह केवल विज्ञान ही था जो भूख और गरीबी की, गन्दगी और निरक्षरता की, अंधविश्वास और निर्जीव रिवाज़ और परम्पराओं की, बर्बाद हो रहे विशाल संसाधनों की ओर इस समृद्ध देश के भूख से पीड़ित देशवासियों की समस्याओं का समाधान कर सकता था।'

(भारतीय विज्ञान कांग्रेस, कलकत्ता, दिसम्बर 1937 में दिए भाषण से)